



Date:28-09-23

From women's reservation to gender equality

The recognition of unpaid labour and equitable sharing of household duties will ultimately dictate whether substantive reform in gender equality is achieved.

Manuraj Shunmugasundaram is DMK Spokesperson and Advocate, Madras High Court.

Last week, Parliament passed the women's reservation Bill, which provides one-third reservation for women in the Lok Sabha and Legislative Assemblies. Data from the Inter-Parliamentary Union show that the share of women in Parliament in India is around 15%. India ranks 141 out of 193 countries on this count. Even Pakistan, South Africa, and Kenya have a higher share of women representatives. Over the last 27 years, there have been several efforts to introduce the women's reservation Bill in Parliament. Such efforts faced opposition from different quarters. That there is a strong moral imperative to increase women's representation is beyond debate. The smooth passage of this law shows consensus around this issue.

Reservation for women in elections to the local bodies in India has resulted in increasing their participation in governance. Research by Tanya Jakimow of the University of New South Wales and Niraja Gopal Jayal shows that, contrary to popular belief, elected women representatives have over time asserted their presence in spite of interference from male family members. A similar outcome may also be seen in higher elected bodies.

Delimitation exercise

However, implementation of the present law is contingent on the conduct of the next Census and the subsequent delimitation exercise. Census and delimitation are not purely administrative eventualities. There has been a freeze on delimitation since 1976 in order to provide a level-playing field for States to contain population growth. The southern States have been more successful in reducing population growth through a series of measures focused around women empowerment. It is now well understood that higher education among girls, increased female labour force participation, and greater financial autonomy among women directly correlate with lower fertility rates. Ironically, States which have improved indicators around women empowerment would now stand to lose seats to Parliament if a delimitation exercise is held.

Another central issue revolves around the legality of the contingency clause itself. Whether a law, let alone a constitutional amendment, can be contingent upon a uncertain future event requires determination by the constitutional courts. It is strange that a much-needed and near-unanimous legislative reform is now inextricably tied to another future law which may not be dealt with until after the next general elections to the Lok Sabha.

Societal approach

In spite of the law, and its laudable intent, the ultimate game changer lies in changing societal approach to gender roles. Representation of women to elected bodies must necessarily be seen in the larger context of female labour force participation in India, which is abysmal by any standards. Real and substantive gender justice will only be achieved when there is an equitable and fair sharing of household chores and domestic responsibilities, which are all aspects of unpaid labour.

Recent research from the Ministry of Statistics and Programme Implementation's Time Use Survey (2019) shows that for 97 minutes spent daily by men on unpaid domestic services for household members, women spend 299 minutes. Women spend 134 minutes on average daily on unpaid care-giving services for household members as compared to the 76 minutes spent by men. It is clear that women bear a disproportionate burden of household responsibilities. This is a result of a patriarchal societal mindset, which will need to change if women are to fully and effectively participate in the labour force, let alone hold the highest elected representative positions. In this context, government programmes which recognise unpaid labour done by women within households, such as the Magalir Urimai Thogai in Tamil Nadu, are designed to recognise and address the vast gulf in unpaid household labour.

The Urimai Thogai scheme is a monthly cash transfer programme. It is devised not as a largesse but as an obligation to women who carry a disproportionate burden in the household. While Tamil Nadu has already a greater number of women in the active labour force in comparison with the rest of the country, this scheme ,along with free bus passes for women, is expected to drive numbers up over the next two decades.

Substantive justice

Nevertheless, when the proportion of women in higher elected bodies increases in accordance with the present law, questions still remain with regard to building capacity for first-time representatives. Initiatives in other countries offer an interesting case study on sustaining women in the political arena. EMILYs List in the U.S. has been providing campaign guidance, mentorship and building capacity for women as they enter politics. Active for nearly four decades, EMILYs List has helped elect 201 members of Congress (equivalent to the House of the People) and 20 Governors (similar to Chief Minister).

Regardless of whether political parties actively groom women leaders, it is now the duty of the governments to build capacity and ensure that the reservation model leads to successful outcomes. The role of the National Commission for Women and the Parliamentary Committee on Empowerment of Women need to be significantly revised to ensure that the women reservation law does not stay a symbolic gesture. Similarly, the recognition of unpaid labour and equitable sharing of household duties will ultimately dictate whether substantive reform in gender equality is achieved.



दैनिक भास्कर

Date:28-09-23

आर्थिक पायदान पर पिछड़े वर्ग कैसे आगे आएं

संपादकीय

संविधान ने अनुच्छेद 17 (छुआछूत निरोधक प्रावधान) सहित अनुसूचित जाति वर्ग के उत्थान के लिए विधायिकाओं और सेवाओं में आरक्षण की व्यवस्था तो की लेकिन 70 वर्षों बाद भी वह सामाजिक और आर्थिक स्तर पर असमानता झेल रहा है। अजीम प्रेमजी यूनिवर्सिटी के अध्ययन (कामकाजी भारत की स्थिति: 2023) में पाया गया कि इस वर्ग की आर्थिक सीढ़ियों पर चढ़ने की रफ्तार सामान्य वर्ग के मुकाबले कम रही है। 1983 से 2021 तक नियमित वेतन वाली नौकरियों में सामान्य वर्ग के 32% लोग बढ़े, जबकि एससी वर्ग के मात्र 22% । यहां तक कि स्व-रोजगार में भी एससी का प्रतिशत कम रहा। शायद सामाजिक-आर्थिक संरचना इस तरह की है कि अनुसूचित के दिहाड़ी मजदूर का बेटा भी मजदूर ही बन रहा है । सन् 2005 में एससी वर्ग के 84.5% दिहाड़ी मजदूरों के बच्चे भी दिहाड़ी मजदूर बने । अगले 14 साल के तमाम तथाकथित विकास के बावजूद सन् 2018 में इस वर्ग के केवल दस फीसदी युवा ही दिहाड़ी मजदूरी छोड़ बेहतर आजीविका में जा सके। शायद शहरों में आज भी इस वर्ग के लोगों को नौकरी देने में उद्योगों में हिचकिचाहट है, जिसका कारण है कुछ सख्त कानून जो इस वर्ग के हित में बनाए गए हैं। विडंबना है कि आर्थिक-सामाजिक रूप से पिछड़े इस वर्ग का उत्थान नहीं हो पा रहा है।

Date:28-09-23

भारत के उदय ने पश्चिमी ताकतों को चौंकाया है

मिन्हाज मर्चेट, (लेखक, प्रकाशक और सम्पादक)

पश्चिमी देश इस बात के आदी नहीं हैं कि 'तीसरी दुनिया' का कोई देश महाशक्ति का दर्जा हासिल कर ले। पिछली बार जब ऐसा हुआ था, यानी चीन का उदय, तो पश्चिम और चीन के बीच शीतयुद्ध शुरू हो गया। 1980 के दशक तक चीन गरीब देश था, लेकिन आज वह आर्थिक और टेक्नोलॉजिकल महाशक्ति बन चुका है। अमेरिका के नेतृत्व में पश्चिम ने सोवियत संघ को तो शीतयुद्ध में हरा दिया था, लेकिन चीन के उदय के खतरे को वे समय रहते भांप नहीं सके। 1990 में चीन की जीडीपी 0.36 ट्रिलियन डॉलर थी और अमेरिका की 5.96 ट्रिलियन डॉलर। दोनों में 1700% का अंतर था। उस समय अमेरिका ही दुनिया का इकलौता दादा था। बोरिस येल्टसिन के नेतृत्व में रूस अराजकता से ग्रस्त था। तब व्लादिमीर पुतिन केजीबी के एक नामालूम अधिकारी भर थे।

मई 1998 में जब भारत ने पोखरण परमाणु परीक्षण किया तो बिल क्लिंटन ने भारत पर आर्थिक प्रतिबंध लगा दिए थे। सीएनएन और अन्य अमेरिकी मीडिया ने भारत के खिलाफ बहुत जहर उगला। अमेरिका के पास 6 हजार से ज्यादा न्यूक्लियर मिसाइलें थीं, वह युद्ध में परमाणु बम का इस्तेमाल करने वाला इकलौता देश था और इसके बावजूद भारत के द्वारा शांतिपूर्ण परमाणु परीक्षण करने भर से उसे पश्चिम की आलोचनाओं का शिकार होना पड़ा था। 1990 के दशक में अमेरिका पूरे समय दुनिया पर किसी दरोगा की तरह रौब झाड़ता रहा। 1990-91 में खाड़ी युद्ध के दौरान उसने गठजोड़ बनाकर इराक पर धावा बोल दिया। उसने इराक पर दस साल का नो-फ्लाई जोन लागू कर दिया और इराकी बच्चों को दवाइयों और भोजन से वंचित कर दिया। इसी कालखंड में अमेरिका के नेतृत्व में पश्चिम ने यूगोस्लाविया को विभक्त कर दिया और बाल्कन प्रायद्वीप में सात नए देश बने। पूर्व-यूगोस्लाविया के इन देशों सर्बिया, क्रोएशिया, स्लोवेनिया, बोस्निया, कोसोवो आदि के बीच आज तक अनेक नस्ली टकराव हो रहे हैं।

लेकिन 2000 के दशक में 9/11 के बाद पश्चिम को मध्य-पूर्व, अफगानिस्तान और पाकिस्तान में पनप रहे इस्लामिक आतंकवाद और तेजी से उभरते चीन का खतरा समझ में आया। इसके बाद पश्चिम ने अपना दशकों पुराना भू-राजनीतिक सिद्धांत बदला। चीन के समक्ष रणनीतिक शक्ति-संतुलन के लिए भारत को स्थापित करने के प्रयास किए जाने लगे। 2005 में भारत-अमेरिका सिविल न्यूक्लियर डील साइन की गई, जबकि इसके मात्र सात साल पहले पोखरण के बाद इसी अमेरिका ने भारत पर आर्थिक प्रतिबंध लगाए थे। 2010 के दशक तक अमेरिका के दूरदृष्टिपूर्ण थिंक टैंक विश्लेषकों ने समझ लिया था कि 2030 तक भारत दुनिया की तीसरी सबसे बड़ी इकोनॉमी बन जाएगा। चीन और भारत के रूप में दो बड़ी एशियाई ताकतों के उदय ने पश्चिम के सामने दुविधा की स्थिति निर्मित कर दी थी। अमेरिका ने समझ लिया कि भारत को पश्चिम के भू-राजनीतिक दायरे में लाना जरूरी है। क्योंकि अगर भारत और चीन एक साथ आ गए तो इससे पश्चिम के सदियों पुराने वर्चस्व का खात्मा हो जाएगा। यही कारण है कि आज अमेरिका भारत को इतना महत्व देता है।

वास्तव में आज पश्चिम चीन को अतीत के सोवियत संघ से भी अधिक बड़ी चुनौती के रूप में देखता है। सोवियत ब्लॉक कभी भी अमेरिका का आर्थिक प्रतिद्वंद्वी नहीं था, वह उसके लिए सैन्य-प्रतिद्वंद्वी भर था। लेकिन चीन दोनों हो सकता है। ऐसे में भारत का साथ उसके लिए अहम हो गया है। पर इसकी अपनी जटिलताएं हैं, क्योंकि भारत स्वयं को तटस्थ ताकतों के स्वतंत्र गुट के नेता के रूप में देखता है। चीन और भारत- दोनों ही आज मध्य-पूर्व, दक्षिण-एशिया, अफ्रीका और दक्षिण अमेरिका के देशों को लुभा रहे हैं। ब्रिक्स और एससीओ में भारत और चीन बड़ी आर्थिक ताकतें हैं। पश्चिम को इससे चिंता होती है, क्योंकि दुनिया पर अब उसका पहले जैसा एकाधिकार नहीं रहा। यही कारण है कि अमेरिका ने चीन को हाईटेक उत्पादों का निर्यात बंद कर दिया है, जिनमें चिप भी शामिल हैं। पश्चिम यह कहकर तो इस कदम को जायज ठहरा सकता है कि चीन एक कम्युनिस्ट तानाशाहीपूर्ण देश है, पर भारत के बारे में क्या? यह एक लोकतांत्रिक देश है और यहां न केवल दुनिया का सबसे बड़ा उपभोक्ता-बाजार है, बल्कि इंटरनेट के सर्वाधिक उपभोक्ता भी यहीं हैं। इसलिए इतना तो तय है कि आज अमेरिका भारत के बिना अपना काम नहीं चला सकता, लेकिन भारत को भी सतर्क रहना होगा क्योंकि पश्चिम खुद को एक बंद घेरे की तरह देखता है और अपने गुट में किसी को इतनी आसानी से प्रवेश नहीं करने देता।

Date:28-09-23

टेक कंपनियों की जवाबदेही तय करना जरूरी हो गया है

विराग गुप्ता, (सुप्रीम कोर्ट के वकील, 'अनमास्किंग वीआईपी' पुस्तक के लेखक)

दृश्य 1 : छत्तीसगढ़ में महादेव एप के नाम से 5000 करोड़ की सट्टेबाजी।

दृश्य 2 : कनाडा में खालिस्तानी आतंकी की हत्या के मामले में अमेरिका और चार देशों के पंचनेत्री गठबंधन द्वारा भारत की जासूसी।

दृश्य 3 : भारत में साइबर व वित्तीय अपराधों का बढ़ता मायाजाल।

दृश्य 4 : टेक कम्पनियों के सहयोग से चुनाव जीतने की जुगत भिड़ा रहे नेता। इन चारों मुद्दों के डिजिटल कनेक्शन व समस्या की विकरालता के चार पहलू देखें :

1. बदहाल टेलीकॉम सेक्टर : 140 करोड़ की आबादी वाले देश में डिजिटल क्रांति के पिरामिड के चार बड़े हिस्से हैं। टेलीकॉम सर्विस प्रोवाइडर, इंटरनेट सर्विस प्रोवाइडर, स्मार्ट फोन और टेक कम्पनियां। जी-20 में डिजिटल पब्लिक इन्फ्रास्ट्रक्चर (डीपीआई) को बढ़ावा देकर सामाजिक सुरक्षा कार्यक्रमों और डायरेक्ट बेनेफिट ट्रांसफर आदि के माध्यम से वित्तीय समावेशन को सफल बनाने के लिए भारत की तारीफ हुई। इसके कई स्याह पहलू हैं, लेकिन फिलहाल डिजिटल इन्फ्रा के जरूरी मुद्दे पर कुछ बातें। एक दशक पहले स्पेक्ट्रम के आवंटन पर कथित घोटाले पर कैंग रिपोर्ट के बाद सरकार का तख्तापलट हो गया था। सरकार अब नेशनल फ्रीक्वेंसी एलोकेशन प्लान (एनएफएपी) सिस्टम लाने पर विचार कर रही है। ऐसी अनेक कवायदों के बावजूद सरकार को अब स्पेक्ट्रम से कमाई के लाले पड़ रहे हैं। बदहाली से जूझ रही टेलीकॉम कम्पनियां बैंक गारंटी देने में भी हाथ खड़े कर रही हैं। सुप्रीम कोर्ट के 2019 के फैसले के बावजूद इन कम्पनियों ने अभी तक 92 हजार करोड़ की देनदारी का भुगतान नहीं किया है। एक आकलन के अनुसार इन पर 6 लाख करोड़ से ज्यादा का कर्ज है।

2. कानून की नाफरमानी : सड़कों के इस्तेमाल के लिए जनता से टोल-टैक्स की वसूली होती है। 2023 के शुरुआती 6 महीनों में फास्ट टैग से सरकार को 30340 करोड़ रुपए की आमदनी हुई। लेकिन भारी मुनाफा कमाने वाली क्रिप्टो, गेमिंग, ओटीटी, फिनटेक और सोशल मीडिया कम्पनियां डिजिटल इन्फ्रा के विकास में सहयोग करने के बजाय टैक्स चोरी के साथ सीनाजोरी कर रही हैं। 129 कम्पनियों और स्टार्टअप ने नेट न्यूट्रैलिटी के नाम पर कानून और टैक्स के दायरे से बाहर रहने के लिए लॉबीइंग शुरू कर दी है। 6 सालों की जद्दोजहद के बाद लचर आईटी कानून को भी टेक कम्पनियां लागू नहीं होने दे रही। इसलिए टेलीकॉम कानून जब बनेगा तो वह कब और कैसे लागू होगा? इंटरमीडियरी की आइ में सेफ हार्बर का दर्जा हासिल करने वाली कम्पनियों की मुनाफाखोरी को नजरअंदाज करने से भारत डिजिटल उपनिवेशवाद की भयानक गिरफ्त में आ गया है।

3. गेमिंग कम्पनियों की टैक्स चोरी : महादेव एप के सटोरियों ने 5 हजार करोड़ का कारोबार किया। इसमें से शादी और फिल्मी सितारों पर खर्च किए गए 200 करोड़ रुपयों पर ही मीडिया में रोमानी खबरें चल रही हैं। दुबई, सिंगापुर और

विदेशों से ऑपरेट हो रहे गेमिंग और सट्टेबाजी के एप्स ने भारतीय अर्थव्यवस्था के साथ युवाओं की कमर तोड़ दी है। केंद्र सरकार और राज्यों की पुलिस इस संगठित अपराध तंत्र के आगे बेबस और लाचार दिखती हैं। हालिया रिपोर्टों के अनुसार गेमिंग कम्पनियों ने भारत में 55 हजार करोड़ की जीएसटी की चोरी की है, जबकि बिजनेस स्टैंडर्ड की रिपोर्ट के अनुसार यह आंकड़ा 1.5 लाख करोड़ का हो सकता है। टैक्स चोरी के इन आंकड़ों की गम्भीरता को दूसरे तरीके से समझने की जरूरत है। पांच करोड़ मुकदमों के बोझ से मुक्ति के लिए अगले चार सालों में ई-कोर्ट सिस्टम पर सरकार 7210 करोड़ रुपए खर्चेगी। डिजिटल इन्फ्रा में सहयोग के बजाय टेक कम्पनियां टैक्स चोरी, जासूसी, साइबर अपराध और चुनावी सिस्टम को हाइजैक करने में लिप्त हैं। इन पर काबू नहीं किया गया तो क्रिप्टो की तरह डिजिटल के अन्य सेक्टर भी धराशायी हो सकते हैं।

4. डिजिटल इन्फ्रा : अगले दो सालों में कुल 120 करोड़ आबादी को इंटरनेट से जोड़ने की कोशिश है। सन् 2020 में लगभग 6.63 लाख मोबाइल टॉवर और 22.8 लाख बेस ट्रांसमिटिंग स्टेशन थे। 5जी के रोलआउट के लिए लगभग 3.3 लाख ट्रांसमीटर स्टेशन बनाए गए हैं। 5जी की सफलता के लिए टेक्नोलॉजी और रिसर्च में निवेश के साथ 12 लाख मोबाइल टॉवरों की आवश्यकता है। इसके लिए बजट आवंटन के साथ बीएसएनएल के पिछले दरवाजे से सरकार कई लाख करोड़ का निवेश कर रही है। पिछले 9 सालों में डाटा 96 फीसदी सस्ता हो गया है और इसकी खपत 43 गुना बढ़ गई है। डाटा क्रांति से मुनाफा कमाने वाली टेक कंपनियों को इन्फ्रा विकास यात्रा में भागीदार बनना चाहिए।



Date:28-09-23

टकराव का हासिल

संपादकीय

न्यायाधीशों की नियुक्ति में देरी का मामला वर्षों से चिंता का सबब बना हुआ है और इस मसले पर सर्वोच्च न्यायालय समय-समय पर अपनी बेचैनी को जाहिर भी करता रहा है। इस बार शीर्ष अदालत ने सख्त रुख अख्तियार करते हुए कहा है कि वह हर दस-बारह दिन में मामले में सुनवाई करेगा, ताकि इसे जल्द हल किया जा सके। देश के विभिन्न उच्च न्यायालयों में न्यायाधीशों के सैकड़ों पद खाली पड़े हैं। तबादलों और प्रोन्नति की सूची भी लंबी होती जा रही है, लेकिन सरकार के स्तर पर नियुक्ति के मामले में तेजी नहीं दिखाई जा रही है। सुप्रीम कोर्ट ने इस बात पर हैरानी जताई है कि बीते दस माह में उच्च न्यायालयों में जजों की तैनाती के लिए कालेजियम ने अस्सी नामों की सिफारिश सरकार से की थी, लेकिन अब तक केवल दस नामों को मंजूरी मिली। सत्तर सिफारिशें लंबित हैं। इनमें से छब्बीस सिफारिशें न्यायाधीशों के स्थानांतरण की हैं, सात दोबारा भेजी गई हैं। नौ कालेजियम को वापस किए बिना लंबित पड़ी हुई हैं। एक संवेदनशील मामला उच्च न्यायालय में मुख्य न्यायाधीश की नियुक्ति का भी अटका हुआ है। पीठ ने न्यायाधीशों की नियुक्ति में इस देरी के मामले की सुनवाई के दौरान निराशा व्यक्त करते हुए सरकार से कहा कि वे बहुत कुछ कहना चाहते हैं, लेकिन चूंकि अटार्नी जनरल ने इस मुद्दे पर जवाब देने के लिए कम समय मांगा है, इसलिए वे खुद को रोक रहे हैं। गौरतलब है कि अटार्नी जनरल ने इस मसले पर पीठ से एक सप्ताह का समय मांगा है।

अंदाजा लगाया जा सकता है कि न्यायाधीशों की नियुक्ति में देरी न्याय प्रणाली को किस स्तर तक प्रभावित कर रही होगी। इसी को रेखांकित करते हुए अदालत ने कहा कि जिन अच्छे और प्रतिभावान वकीलों के नाम न्यायाधीश बनाने के लिए अनुशंसित किए गए थे, उनमें से कई पीछे हट गए हैं। जाहिर है, यह चिंताजनक स्थिति है और इस पर सर्वोच्च अदालत का नाराज होना स्वाभाविक है। जजों की नियुक्ति में हीला-हवाली कोई नई बात नहीं है। नियुक्ति के लिए जांची परखी कालेजियम प्रणाली होने के बावजूद वर्षों से जिला अदालतों से लेकर उच्च न्यायालयों तक न्यायाधीशों के सैकड़ों पद खाली पड़े हुए हैं। इस मसले पर सरकार और न्यायपालिका के बीच अक्सर टकराव के बिंदु उभरते रहे हैं। केंद्र सरकार द्वारा पिछले साल जारी आंकड़ों के मुताबिक जिला अदालतों में न्यायाधीशों के पांच हजार आठ सौ पचास पद खाली थे। सभी उच्च न्यायालयों में जजों के कुल ग्यारह सौ आठ पद स्वीकृत हैं, जिनमें से तीन सौ तैंतीस खाली थे।

यह स्थिति तब है जब देश में प्रति दस लाख आबादी पर महज बीस न्यायाधीश उपलब्ध हैं। सुप्रीम कोर्ट इस बात पर भी अपनी चिंता जाहिर कर चुका है कि आबादी के लिहाज से न्यायाधीशों की संख्या नहीं बढ़ रही है। न्यायाधीशों की नियुक्ति का मामला सरकार और उच्चतम न्यायालय के बीच टकराव का कारण बनता रहा है। दरअसल, केंद्र सरकार ने सर्वोच्च न्यायालय और उच्च न्यायालयों में न्यायाधीशों की नियुक्ति और स्थानांतरण के लिए राष्ट्रीय न्यायिक नियुक्ति आयोग अधिनियम बनाया था, जिसे सर्वोच्च न्यायालय ने न्यायपालिका के कामकाज में हस्तक्षेप बताकर 2015 में खारिज कर दिया था। दूसरी ओर, सरकार अक्सर कालेजियम की कार्यप्रणाली पर सवाल उठाती रही है। जाहिर है, सरकार और सर्वोच्च न्यायालय के बीच इस तनातनी का खमियाजा आखिर जनता को ही भुगतना पड़ेगा। दोनों संस्थान अपनी जिम्मेदारी और देश की जरूरत को ध्यान में रखकर कदम उठाएं, तो मामला जल्द सुलझ सकता है और टकराव की स्थिति से बचा जा सकता है।

Date:28-09-23

खेती के बदलते आयाम

नृपेंद्र अभिषेक नृप



आज विभिन्न प्रकार की तकनीकों के साथ कृषि में उत्पादन बढ़ाने की नई विधियां भी आ चुकी हैं। इन्हीं विधियों में एक है जैविक खेती, जो प्रदूषित होते संसार के लिए वरदान साबित हो सकती है।' आर्गेनिक वर्ल्ड रपट 2021' के अनुसार वर्ष 2019 में विश्व के 7.23 करोड़ हेक्टेयर क्षेत्र में जैविक खेती की गई, जिसमें एशिया का 51 लाख हेक्टेयर क्षेत्र भी शामिल है। भारत में भी पिछले कुछ वर्षों में जैविक खेती में वृद्धि हुई है। भारत में 2019 में जैविक खेती का रकबा बढ़कर 22 लाख 99 हजार 222 हेक्टेयर हो गया। हालांकि अब भी यह परंपरागत कृषि क्षेत्र की तुलना में मात्र 1.3 फीसद है। भारत में अभी मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र और ओड़ीशा समेत दर्जन भर राज्यों में जैविक खेती हो

रही है। इस समय देश में लगभग 43 लाख 38 हजार 495 किसान जैविक खेती कर रहे हैं, जिसमें से अकेले सात लाख 73 हजार 902 मध्य प्रदेश के हैं।

जैविक खेती फसल उगाने की वह नई तकनीक है, जिसमें रासायनिक खादों और कीटनाशकों का प्रयोग करने के बजाय, जैविक खाद, हरी खाद, गोबर खाद केंचुआ खाद का प्रयोग किया जाता है। जिस दौर में पर्यावरण को लेकर पूरी दुनिया चिंतित है, उसमें जैविक खेती रसायनों से होने वाले दुष्प्रभाव से पर्यावरण का बचाव करती है। भूमि की उपजाऊ क्षमता में वृद्धि और फसलों की पैदावार में बढ़ोतरी करती है। जैविक खेती विधि द्वारा उगाया गया अनाज उच्च गुणवत्ता का होता है, जो स्वास्थ्य की दृष्टि से उत्तम होता है।

जैविक खेती का मतलब यह नहीं कि इसमें मानव निर्मित रसायनों का उपयोग नहीं किया जाता। बल्कि जैविक खेती के कई तरीकों में भी मानव निर्मित उर्वरकों और कीटनाशकों का उपयोग फसल उत्पादन में सुधार के लिए नहीं, बल्कि मिट्टी की उर्वरता में सुधार के लिए किया जाता है। इसका मतलब है कि ये रसायन मिट्टी में जाते हैं, लेकिन भोजन में नहीं जाते हैं। हरित क्रांति के पहले से बढ़ती जनसंख्या और आय की दृष्टि से उत्पादन बढ़ाने की जरूरत महसूस होने लगी थी। फिलहाल अधिक उत्पादन के लिए खेती में अधिक मात्रा में रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशक का उपयोग करना पड़ता है। इससे कम जोत वाले सामान्य और छोटे किसानों को खेती में अत्यधिक लागत लगानी पड़ रही है। इससे जल, भूमि, वायु और वातावरण भी प्रदूषित हो रहा है। इसके साथ ही खाद्य पदार्थ भी जहरीले हो रहे हैं। इसलिए इस प्रकार की सभी समस्याओं से निपटने के लिए पिछले कुछ सालों से सरकार जैविक खेती को बढ़ावा दे रही है।

जैविक खेती काफी फायदेमंद साबित होगी। इससे भूमि की उर्वरा शक्ति बनी रहती है और जैविक खादों का प्रयोग करने से मिट्टी की उर्वरक क्षमता की गुणवत्ता में निरंतर सुधार होता रहता है। यही नहीं, बल्कि इसमें सिंचाई की आवश्यकता कम होती और भूमि की जलधारण क्षमता भी बढ़ती है। जो पहले रासायनिक खादों के प्रयोगों से वातावरण प्रदूषित हो रहा था, जैविक खादों के प्रयोग से प्रदूषण रहित रहता है। अनेक बीमारियों से इंसान और पशु-पक्षियों का बचाव होता है। जैविक खेती से उगाया गया अनाज सेहत के लिहाज से भी उच्च गुणवत्ता वाला होता है इस तरह उगाए गए अनाज का मूल्य भी अधिक होता है, जिससे किसान की आमदनी में बढ़ोतरी होती है। यानी कम लागत में अच्छा मुनाफा।

जैसा कि हम देख रहे हैं, रासायनिक खाद और कीटनाशक मिट्टी को खराब कर रहे हैं, इससे निपटने में जैविक खाद बेहद मददगार साबित हो सकती है। यह भूमि की जलधारण क्षमता बढ़ाती और इससे भूमि से पानी का वाष्पीकरण भी कम होता है। इसके साथ ही जैविक खेती से भूमि में नाइट्रोजन स्थिरीकरण बढ़ता है और मिट्टी का कटाव भी कम होता है, जो कि इस समय की बड़ी समस्या बनती जा रही है। जैविक खेती पर्यावरण की दृष्टि से भी काफी लाभकारी है। इससे भूमि के जल स्तर में वृद्धि होती है। मिट्टी, खाद्य पदार्थ और जमीन में पानी के माध्यम से होने वाले प्रदूषण में कमी आती है। खाद बनाने के लिए कचरे का उपयोग करने से बीमारियों में भी कमी आती है।

जैविक खेती त्वरित रूप से फायदेमंद साबित होने वाला उद्यम नहीं है। इसके लिए वक्त देना पड़ता है। भारत के साथ कुछ अन्य देशों के किसानों के अनुभव बताते हैं कि रासायनिक खेती को तत्काल छोड़कर जैविक खेती अपनाने वाले किसानों को पहले तीन साल तक आर्थिक रूप से घाटा हुआ था, चौथे साल बराबरी का सौदा होता है और फिर पांचवें साल से लाभ मिलना शुरू होता है। ऐसे में बहुत सारे किसान शुरुआत में ही खेती की तकनीक बदल लेते हैं।

भारत में सत्र फीसद छोटी जोत वाले सीमित साधन वाले किसान हैं। फिलहाल इन किसानों के पास पशुओं की संख्या भी तेजी से कम हो रही है, जिससे जैविक खाद उन्हें घर पर बनाना मुश्किल हो रहा है और उन्हें जैविक खाद बाजार से खरीदनी पड़ती है। वैसे तो जैविक खाद निर्माताओं की संख्या की दृष्टि से देखें तो भारत में साढ़े पांच लाख जैविक खाद निर्माता हैं, जो विश्व के जैविक खाद निर्माताओं का एक तिहाई हैं। मगर भारत के निम्नानबे फीसद खाद उत्पादक असंगठित लघु क्षेत्र के हैं तथा इनमें से अधिकांश बिना प्रमाणीकरण करवाए जैविक खाद की आपूर्ति करते हैं।

भारत सरकार द्वारा जैविक खेती को प्रोत्साहित करने के लिए कई योजनाएं चलाई जा रही हैं, जिनके सकारात्मक परिणाम भी सामने आ रहे हैं। पिछले कुछ वर्षों में भारत में जैविक खेती का क्षेत्र और उत्पादन तेजी से बढ़ा है। 'आर्गेनिक फार्मिंग एक्शन प्रोग्राम' 2017-2020 का उद्देश्य भी जैविक खेती को प्रोत्साहित और विकसित कर भारतीय कृषि को नए आयाम में ले जाना है। आज भारत में जैविक खेती में अपना योगदान देने के साथ ही यहां आठ लाख पैंतीस हजार पंजीकृत जैविक कृषि उत्पादक हो गए हैं।

हाल ही में आस्ट्रेलिया में दुनिया भर के वैज्ञानिकों की हुई बैठक में वैज्ञानिकों का कहना था कि अनुमान के अनुसार पचहत्तर अरब टन मिट्टी हर वर्ष बेकार हो रही है। इससे अस्सी फीसद खेती की जमीन की उर्वरा शक्ति पर असर पड़ रहा है। सिडनी विश्वविद्यालय के वैज्ञानिकों ने एक व्यापक खोज की, जिसके अनुसार चीन की धरती कुदरती खाद के साधनों जैसे गोबर, गोमूत्र, पेड़ों के पत्ते आदि से ठीक न होने के कारण सबसे अधिक खराब हो रही है। ऐसे ही भारत की धरती भी है, जहां रासायनिक खादों का अधिक प्रयोग है। यह खराबी चीन के मुकाबले बहुत कम है, फिर भी चिंताजनक है। यूरोपीय देशों में जमीन की खराबी चीन के मुकाबले एक तिहाई है, क्योंकि वहां रासायनिक खादों का उपयोग बहुत कम हो रहा है।

स्पष्ट है कि समस्या दिन पर दिन विकट होती जा रही है। ऐसे में इसका एकमात्र समाधान यह है कि भारत की परंपरागत धरती पोषण की नीति अपना कर गोबर, गोमूत्र और कंपोस्ट खाद का प्रयोग किया जाए। वैसे भी भारत में इसकी लंबी संस्कृति रही है। गोबर आदि की खाद से किसान युगों-युगों से अपनी धरती की उपज बढ़ा रहे हैं। इसका व्यापक असर तब दिखेगा, जब सरकार हानिकारक रासायनिक खाद का आयात बंद कर किसानों को देसी खाद से खेती करने को प्रोत्साहित करे। शुरुआत के कुछ सालों तक दिक्कतें आएंगी, लेकिन सरकार किसानों के साथ खड़ी होगी, तब इसे अमलीजामा पहनाया जा सकता है। ऐसा न करने से भारत की खेती का वही हाल होगा जो चीन की खेती का हो रहा है।



भारतीय विदेश मंत्री एस जयशंकर ने फिर देश की दृढ़ता का परिचय देकर दुनिया को स्पष्ट संदेश दिया है। संयुक्त राष्ट्र के मंच से ही नहीं, संयुक्त राज्य अमेरिका की धरती से भी भारतीय मजबूती का इजहार जरूरी और स्वागतयोग्य है। वे दिन गए, जब चंद्र देश दुनिया पर अपना एजेंडा थोपते थे। विदेश मंत्री ने कनाडा को भी काफी मुखर अंदाज में संदेश दे दिया है कि वह आतंकवाद के खिलाफ लड़ाई में अपना राजनीतिक फायदा देख रहा है। भारतीय राजनय का यह नया स्वरूप बहुतों को चौंका सकता है, पर ऐसा करने के अलावा भारत के पास और कोई गुंजाइश नहीं है। कुछ देश भारत के लिए हमेशा चुनौती पेश करते हैं। विशेष रूप से पिछले महीनों से खालिस्तान मामले में जिस तरह भारत पर दबाव डाला जा रहा है, उसकी सिर्फ निंदा और भर्त्सना ही की जा सकती है। भारतीय विदेश मंत्री ने फिर दोहराया

है कि कनाडा को अपने आरोपों को साबित करने के लिए प्रमाण पेश करना चाहिए। बार-बार कनाडा से प्रमाण मांगना भी भारतीय मजबूती का संकेत है। विदेश मंत्री ने यह भी स्पष्ट किया है कि जैसे आरोप भारत पर लगाए जा रहे हैं, वैसी प्रवृत्ति भारत की कभी नहीं रही है।

अमेरिका की धरती पर विदेश मंत्री ने यह भी साफ कर दिया है कि भारत की रूस के साथ दोस्ती बनी रहेगी। दरअसल, रूस की सीधी आलोचना से भारत लगातार बचता आ रहा है और इसलिए पश्चिमी देशों में भारत की आलोचना भी हो रही है। यह समझने की बात है कि भारत और रूस के बहुत गहरे व पुराने संबंध रहे हैं और एक युद्ध की वजह से भारत रूस से अपने संबंध तोड़ नहीं सकता। भारत युद्ध नहीं चाहता और यह बात रूस को एकाधिक बार बता चुका है, पर इसके आगे बढ़कर रूस के खिलाफ कुछ करना भारत उचित नहीं मानता। यह विडंबना है, पश्चिम देश अभी भी किसी न किसी प्रकार से रूस से संबंध रखे हुए हैं, पर उनकी कोशिश है कि भारत-रूस संबंध टूट जाए। रूस के संबंध में भारत की नीति का दृढ़ होना जरूरी है, जी-20 शिखर सम्मेलन के समय भी भारत ने यही किया था। न्यूयॉर्क में विदेश मंत्री ने यह भी स्पष्ट कर दिया है कि रूस अब तक खुद को यूरोप से ज्यादा करीब महसूस करता था, पर अब वह एशिया की ओर मुड़ रहा है। विदेश मंत्री का यह इशारा यूरोप और अमेरिका के लिए भी चिंता का कारण होना चाहिए। भारत आज अमेरिका और यूरोप के साथ है, पर उसे अपने हित की भी पूरी चिंता है।

इसमें कोई दोराय नहीं है कि भारतीय विदेश मंत्री दुनिया के देशों में भारत की नई दृढ़ता और स्पष्टवादिता के लिए भी जाने जाते हैं। न्यूयॉर्क में उन्होंने विदेशी पत्रकार के सवाल के जवाब भी खास तल्खी के साथ दिए हैं। उनके स्वर और भाव में यह पीड़ा बार-बार झलकती है कि भारत को सही संदर्भ में नहीं समझा जा रहा है। उनसे पूछा गया कि हाल के दिनों में भारत के लोकतंत्र स्कोर को कम कर दिया गया है, इस पर जयशंकर ने दोटूक कहा कि ये रिपोर्टें पूर्वाग्रह-ग्रस्त व पक्षपातपूर्ण हैं। यह संकेत भी भारतीय विदेश मंत्री ने विभिन्न विश्व मंचों पर बार-बार दिया है कि अब नए भारत को हर बात के लिए पश्चिमी देशों के प्रमाणपत्र की जरूरत नहीं है। यह कहना ही चाहिए कि विदेश मंत्री की मुखरता को जमीनी स्तर पर ठोस विकास के साथ और बल देने की जरूरत है। व्यावहारिकता यही है कि दुनिया के देशों को भारत की परवाह करने की आदत तभी पड़ेगी, जब उन्हें भारत की किसी नाराजगी से नुकसान महसूस होगा।